IMPACT FACTOR 7.50 (SJIAI)
बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 4, Issue 2, April-june, 2026
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20259671
ISSN : 3048-6971

रांगेय राघव के उपन्यासों में जाति व्यवस्था और शोषण

लक्ष्मण कुमार
शोधार्थी
हिंदी विभाग
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
Email : Laxmankumarsharma9966@gmail.com

शोध सार

रांगेय राघव हिंदी साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर हैं, उन्होंने हिंदी की तमाम विधाओं को अपनी लेखनी से समृद्ध किया है, अपने अल्प जीवन में लगभग अड़तीस उपन्यासों की रचना कर महत्वपूर्ण कथाकार के रूप में प्रसिद्ध हुए, इनके उपन्यास में जाति व्यवस्था और शोषण के रूपों को देखा जा सकता है, समाज में जाति के आधार पर नीची जातियों का शोषण, जातीय श्रेष्ठताबोध, जातीय दम्भ या ग़ुमान को रांगेय राघव ने उपन्यास के माध्यम से प्रस्तुत किया है, उच्च जाति में पैदा हुए रांगेय राघव ने समाज की काली सच्चाई को देखा और महसूस किया था, मनुष्य मनुष्य के बीच हो रहे भेद -भाव से वे चिंतित और निराश थे, रांगेय राघव जाति के नहीं बल्कि मनुष्यता के समर्थक थे, उनके उपन्यास में समाज की सच्चाई दर्ज है।

बीज शब्द – जाति व्यवस्था,शोषण,वर्णव्यवस्था,श्रेष्ठताबोध,दंभ

मूल आलेख

भारत में जाति व्यवस्था प्राचीन समय से ही चली आ रही है। चार वर्णों में विभाजित हिन्दू धर्म में अनेक जातियाँ है। वर्ण व्यवस्था क्रम में ब्राह्मणों ने अपने आप को सबसे ऊपर रखा। उसके बाद क्षत्रिय, वैश्य और अंत में शूद्रों को स्थान दिया। लंबे समय से वर्णव्यवस्था शोषण का तंत्र रहा है। इसमें अपने को श्रेष्ठ मानने वाली जातियाँ अपने से नीची जातियों का शोषण करती आई है। ब्राह्मणों द्वारा बनायी गयी इस व्यवस्था में अपने लिए पूजा-पाठ कराना और शिक्षा ग्रहण (पुरोहित) कराने का अधिकार लिया। क्षत्रिय को सैनिक (योद्धा) होने का अधिकार मिला, वैश्य को खेती-बाड़ी (व्यापारी और किसानी) का अधिकार मिला और शूद्रों को सबकी सेवा करने की ज़िम्मेदारी अनिंदक रहते हुए करने को मिली। मनुस्मृति में शूद्रों के कार्य का वर्णन इस प्रकार है "ब्रह्मा ने ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों की अनिंदक रहते हुए सेवा करना ही शूद्रों के लिए प्रधान कर्म बनाया है।"[i] शूद्रों पर कई तरह से अत्याचार होते थे। उन्हें शिक्षा का अधिकार नहीं था। मंदिर प्रवेश का अधिकार नहीं था। वे वेद-अध्ययन नहीं कर सकते थे। ऐसे तमाम प्रतिबंध उनपर थोपे गए थे। वर्णव्यवस्था के पहले और दूसरे पायदान वाली जातियों को सवर्ण कहा जाता है। भीमराव अंबेडकर लिखते हैं, "सवर्ण, जो वर्ण व्यवस्था के भीतर उच्च जाति के हैं। यह शब्द द्विज जातियों के लिए रूढ़ हो गया।"[ii] हजारों सालों से सवर्ण समाज जाति के नाम पर नीची जातियों का शोषण करता आया है। समाज में जाति एक रोग के समान है जो मनुष्य की मनुष्यता का गला घोंट देता है। जाति के आधार पर शोषण के कई रूप दिखायी पड़ते हैं। कभी उच्च जाति वाले नीच जाति वालों की जमीन हड़प लेते हैं, कभी उनकी बहू-बेटियों की इज्जत लूट लेते हैं, कभी उन्हें जाति के नाम पर मारा-पीटा जाता है,कभी जाति के नाम पर हत्याएँ भी कर दी जाती हैं। ऐसी अनेक घटनाएँ जाति के नाम पर पहले भी होती थीं और आज भी होती हैं। अंबेडकर जाति-व्यवस्था तोड़ने के पक्ष में थे। उनका मानना था "जाति व्यवस्था तोड़ने का असली तरीका अंतरजातीय भोजन और अंतरजातीय विवाह नहीं, बल्कि उन धार्मिक धारणाओं को नष्ट करना है जिन पर यह व्यवस्था टिकी हुई है।"[iii] भारतीय समाज के लिए जाति व्यवस्था एक कोढ़ है। जाति किसी के लिए गर्व का विषय बनी तो किसी के लिए शर्म का। कबीर के हवाले से पुरुषोतम अग्रवाल लिखते हैं "कबीरदास कितनी गहरी व्यथा के साथ इस बात को पहचानते हैं कि उन्हें जुलाहा कहा जाये या कोरी, दूसरों की निगाह में वे 'जात कमीना' ही हैं।"[iv] सदियों से चली आ रही इस व्यवस्था ने समाज को कमजोर बना दिया है।

रांगेय राघव के उपन्यासों में जाति के आधार पर शोषण, जातीय दम्भ, जातीय श्रेष्ठताबोध को देखा जा सकता है। उनके उपन्यासों में सामाजिक कुरीतियों का सूक्ष्म चित्रण मौजूद है। 'आखिरी आवाज' में उन्होंने उच्च जातियों के भीतर के जाति-दंभ और अहंकार की मौजूदगी को रेखांकित किया है। ऊँची जाति की स्त्री हो या पुरुष दोनों में यह पारंपरिक चेतना बनी हुई है कि वह सिर्फ शासन करने हेतु बने हैं। बाकी जातियाँ उनकी बराबरी नहीं कर सकतीं। सरपंच चंचल सिंह की माँ पुराने दिनों के जातीय गुमान को याद कर कहती है "अरे बेटा! पुराने जमाने नहीं रहे। हम ठाकुर। काहे को तो चंचल को सरपंची करनी पड़ती और पहले तो हर एक ठाकुर सरपंच था। पर जमाने का ही फेर है। सारे नीच-कमीन ऊपर उठ आए? "अब तो नाउ भी ठाकुर हो गए, पत्तल उठाने से इंकारी करने लगे।"[v] इसी उपन्यास में उच्च जाति के लोगों के भीतर जातीय अहंकार और श्रेष्ठताबोध को देखा जा सकता है। सिर हिलाकर सरपंच ने कहा "ठाकुर गजराजसिंह चरित्र का पक्का है। कुछ भी कह लीजिए, खानदानी आदमी खानदानी ही होता है। लोहे का टुकड़ा कभी पानी पर तैरता नहीं। पी.आई. साहब, यह कांग्रेस की बात मेरी समझ में नहीं आती कि जाँत-पाँत तोड़ दो, सब एक हो जाओ। अब मैं आपसे पूछता हूँ, यह तो निहालकौर है, नाई की जात,

क्या इज्जत थी नाई की? नाइयों की कोई इज्जत होती है? दुनिया-भर के तो बुरे काम ये लोग करते हैं और अब उनको ये हक मिल गए है।"[vi] जातीय गुमान शोषण करने को प्रेरित करता आया है। आज भी समाज में इस गुमान के कारण नीची जातियों को शोषण का शिकार होना पड़ता है। 'कब तक पुकारूँ' में जाति-आधारित परंपरा के विरुद्ध प्रेम करने पर उच्च जाति (क्षत्रिय) के ठाकुर विक्रम सिंह की पत्नी के भीतर जातिवादी कट्टरता और हीन भावना को देखा जा सकता है। ठाकुर विक्रम सिंह की पत्नी अपने लड़के को लेकर परेशान है, क्योंकि उनका लड़का एक नटनी से प्रेम करता है। जाति से अलग प्रेम या विवाह करना इज्जत चली जाने की बात मानी जाती है। खासकर सवर्ण समाज में अपनी इज्जत को लेकर ज्यादा आग्रह देखा जाता है। भाभी ने कहा "मगर उसने तो अभी खाना भी नहीं खाया है? दस बज रहे हैं। पूस की ठंड है। मेरी तो दांती बज रही है। जन्म लिया था सूअर ने ठाकुर के घर, घूमा है तो नटनी के पीछे, मेरी तो उसने इज्जत बिगाड़ दी।"[vii] दूसरी जाति में प्रेम या विवाह करना आज भी लोगों को भाता नहीं है, जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में उच्च जाति के लोगों ने अपने से निम्न मानी जाने वाली जाति के लोगों के मस्तिष्क में चालाकी पूर्वक यह अवधारणा बैठा दी की जातिव्यवस्था ईश्वर प्रदत्त है, और उच्च जाति में जन्म पुण्य करने से मिलता है। जाति के अर्थ बोध के कारण इसे व्यवस्था के भीतर ईश्वर प्रदत्त मानने पर मजबूर हो जाते हैं, नट ऐसे हीं सोचते हैं "नीच नहीं हैं हम करनट। नीच जात हैं। बस! सो तो भगवान ने बनाया है। करमफल से जनम मिलता है और अपने-आप पुन्न से मानुस-जनम बढ़ता है। ऊँची जात मिलती है।"[viii] इसी आधार पर इनका शोषण उच्च जाति के लोग करते आए हैं और वे इसे ईश्वर प्रदत्त समझ और शोषित होने पर मजबूर हैं। इस उपन्यास में करनटों के साथ हो रहे जातिगत शोषण को देखा जा सकता है। पुलिस भी उच्च जातियों की ही बात सुनती है। नटों की बहू-बेटियों की इज्जत लूटी जाती। उपन्यास में उच्च जाति के वर्चस्व को देखा जा सकता है "दोनों ठाकुर अब पुलिस से मिले हुए थे चरनसिंह मूँछों पर ताव देता था। उधर ठाकुर हरनाम के प्रयत्नों से नटों में से कई जवानों को थाने में पकड़ लिया गया था और कई जवान नटिनियों को सिपाहियों की बुभुक्षा को तृप्त करना पड़ा था।"[ix] प्रशासन और उच्च जातियों के लोग दलितों के खेत में लगे फसलों को काट अपने में बाँट लेते ,नीची जातियों का सुनने वाला उनका संरक्षण करने वाला कोई नहीं "चमारों की खेती खड़ी थी, कट रही थी। पर कौन काट रहा था इसका कोई हिसाब नहीं था। ठाकुरों ने उनका जैसे बाँट कर लिया था। चोरी के माल का आधा दरोगाजी के यहाँ जाता था और फिर किसी का डर शेष नहीं था।"[x] शासन-प्रशासन सभी पदों पर उच्च जाति के लोग बैठे थे, नटों की कोई सुनने वाला नहीं था। डर और भय के कारण शोषण का शिकार हो रहे थे।

'लखिमा की आँखें' में जातीय विद्वेष को देखा जा सकता है "पता नहीं, वे कोरियों को शूद्र क्यों कहते हैं। कोरी कोई बुरा काम नहीं करते; वे कपड़ा कातते-बुनते हैं। फिर भी उनका छुआ पानी गंदा हो जाता है। कोई नहीं जानता कि यह झगड़ा कब समाप्त होगा। आज वे पानी भरने के लिए अपने कुएँ पर गए। चमारों के पास कुआँ नहीं है, क्योंकि उन्हें अधिकार नहीं, वे उसी हौज में से पानी ले जाती हैं जिसमें से बैलों को पानी पिलाया जाता है, लेकिन कोरियों ने अपना कुआँ बना लिया है, और उसके बनाते समय छह कोरी जान से मारे गए थे। कपालि का पिता उसी में मारा गया था। आज उसी कुएँ में किसी ठाकुर ने विष डाल दिया था, क्योंकि वह उन्हें गाँव से भगाना चाहता था। सारे सवर्ण एक ओर थे।"[xi] जातीय द्वेष मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देता, यहाँ कोरी और दलित जातियों के साथ हो रहे जातीय शोषण और अत्याचार को देखा जा सकता है, कोरी जातियों का छुआ पानी गंदा हो जाता है और चमारों को तो जानवरों से भी बदतर समझ जाता है । 'लोई का ताना' में कबीर के समय के जाति वर्चस्व का चित्रण है। जाति की पीड़ा कबीर की वाणी में झलकती है। कबीर ने जीवनपर्यंत वर्णव्यवस्था का विरोध किया। इस उपन्यास में ब्राह्मणों के जातीय अहंकार को देखा जा सकता है। कबीर कहते हैं, "ब्राह्मणों का अहंकार 'नीच-जाति नीच-जाति' कहकर हमारा अपमान करता है। हम जुगी हैं तो क्या आदमी नहीं हैं क्या लोई।"[xii] वर्णव्यवस्था के अंतर्गत ब्राह्मणों की यह मान्यता है कि कोई भी शूद्र उनसे प्रतिवाद नहीं कर सकता, जब जुलाहे ब्राह्मणों से तर्कानुसार प्रतिवाद करते हैं तो ब्राह्मणों के अंदर का जातिवादी अभिमान बोलने लगता है, "अब भी काशी में रहने का धरम है? ब्राह्मणों को ऐसे जुलाहे फटकारने लगेंगे तब तो काम चल चुका। प्रजा क्या कहेगी? प्रजा वही कहेगी जो अब कह रही है। सारे शूद्र उसी की जय बोला करते हैं, सत्यानाश हो गया। मुझे भंगी छू गया। मैं खड़ाऊँ मारी तो बोला।

'पंडित देखा मन यों जानी!
कहु धौ छूत कहाँ ते उपजी
तबहिं छूत तुम मानी
नाद अरु बिन्दु रुधिर एक सँगै
घट ही मैं घट सज्जे
अष्ट कमल को पुहुमी आई
कहँ यह छूत उपज्जे
लख चौरासी बहुत बासना
सो सब सरी जो माटी
एकै पाट सकल बैठारे
सींचि लेत धौं काटी।
छूतहिं जेवन छूतहिं अचवन
छूतहिं जग उपजाया,

कहत कबीर ते छूत बीबर्जित

जाके संग न माया।।'

अनर्थ हो रहा है। ब्राह्मणो! जागो। धर्म के लिए उठो। उधर यवनों ने तो नाश कर ही रखा है, और ये नीच लोग तो वेद का ही टाट ही उलट देना चाहते है।"[xiii] कबीर ने समाज में जाति के नाम पर हो रहे शोषण को देखा और झेला था। उन्होंने खुलकर इसका विरोध भी किया था। 'रत्ना की बात' में जाति का आतंक और भय देखने को मिलता है, उच्च जाति के लोग मेहतर जाति को अशुभ मानते हैं, इसलिए काशी के मेहतर सुबह होने से पहले रास्तों को साफ कर चले जाते हैं, "भगवती पतिततारिणी जाह्नवी के प्रति निकले हुए वे शब्द धीरे-धीरे आने-जाने वालों के कानों में गूँजने लगे, जिनको सुनकर अँधेरे ही में पथों पर झाड़ू लगा चुकने वाले मेहतर अब वहाँ से भाग निकले, ताकि अपने दर्शन से वे उच्च जाति के पवित्र लोगों को प्रातः काल ही अशुभ के सम्मुख न ले जा सकें।"[xiv] ब्राह्मणों ने अपने अंदर की जाति श्रेष्ठता को सदैव अक्षुण्ण रखने का प्रयास किया है, वे अपने को मनुष्य होने की अपेक्षा ब्राह्मण होना ज्यादा श्रेष्ठ मानते हैं। जाति की श्रेष्ठता का भय दिखा कर नीची जातियों को सदियों से मानसिक रूप से गुलाम बना कर रखा। इसी उपन्यास में जातिश्रेष्ठता को भी देखा जा सकता है। तुलसी के गुरु (नरहरिदास) ब्राह्मण थे। उन्होंने तुलसी से कहा, "आज से रामबोला नहीं, तेरा नाम तुलसीदास है समझा। अब तू पवित्र हुआ। कल और भी संस्कार होंगे। याद रख तू ब्राह्मण है। ब्राह्मण!" कहते हुए नरहरि के उन्नत ललाट पर एक गौरव छा गया। उन्होंने हाथ उठाकर कहा, "वत्स! तेरे पूर्वजों के सामने देवताओं और स्वयं नारायण ने घुटने टेककर वंदना की है। तेरे पूर्वज महर्षि भृगु ने जब क्रुद्ध होकर साक्षात् शेषशायी विष्णु के वक्ष पर पदाघात किया था, तो अनंत नारायण ने मुस्करा कर केवल उनका पाँव दबाकर उन्हें प्रसन्न कर लिया था। तेरे पूर्वजों का क्रोध विकराल था वत्स! अत्याचारी राजा वेन के प्रहारों से जब प्रजा त्राहि-त्राहि करने लगी थी, तब ब्राह्मणों ने उस दुर्धर्ष दुराचारी को हुंकारों से ही भस्म कर दिया था। मदांध सगर के 60000 पुत्रों ने जब महर्षि कपिल पर लांछन लगाया था तो उस समय ऋषि की एक दृष्टि से वे सब राख होकर गिर पड़े थे। पुत्र! महर्षि दुर्वासा के प्रचंड क्रोध के कारण एक ही शाप से छप्पन करोड़ यादवों का सर्वनाश हो गया था। तू उन देदीप्यमान ब्रह्मपुत्रों की संतान है। एक-एक ब्राह्मण वेद के रहने का पवित्र स्थान है। आज म्लेच्छों के कारण प्रजा में कलि का अट्टहास हो रहा है और व्यामोह में वे ही पवित्र ब्राह्मण अपने त्रैलोक्य को कम्पित करने वाले पराक्रम को भूलकर आप भटक रहे हैं! क्या समझते हो तुम लोग? यह अन्याय यों ही चलता रहेगा? शूद्र ब्राह्मण बन रहे हैं, म्लेच्छ धर्म नाश कर रहे हैं। चारों ओर वर्णाश्रम का ध्वस्त हो रहा है।"[xv] नरहरिदास कपोलकल्पित कथा के माध्यम से तुलसी को अपनी जाति पर अभिमान करना सिखा रहे हैं। यहाँ जाति श्रेष्ठता का दंभ देखा जा सकता है। इस उपन्यास में उच्च जातियों का शिक्षा और धर्म ग्रंथों पर अधिकार की बात को जाना जा सकता है। वेदों पर ब्राह्मणों और क्षत्रिय का अधिकार रहा है। वैश्य और शूद्रों को इससे वंचित रखा गया है। सबकी सेवा करना उनका कर्तव्य बताया गया है। नरहरिदास तुलसी से कहते हैं, "वेद का अधिकार सबको नहीं होता पुत्र!"

"तो?"

"केवल ब्राह्मण और क्षत्रिय ही पढ़ सकते हैं।"

"और वैश्य?"

"वे नहीं।"

"शूद्र?"

"शूद्र का काम सेवा करना है।"[xvi] ऐसी धारणा हजारों साल से शोषण करने का माध्यम बनता आ रहा है,जातीय गुमान ,जातीय श्रेष्ठताबोध समाज में एकता को खंडित करता रहा है और आज भी समाज में जाति के नाम पर शोषण जारी है.दुर्भाग्य है की पढ़े लिखे लोग भी इस व्यवस्था को बनाये रखना चाहते है जिससे उनका वर्चस्व कायम रहे ,नरहरी को गुरु के रूप में नही बल्कि समाज विभाजक के रूप में देखा जा सकता है .

रांगेय राघव ने अपने उपन्यासों में समाज में व्याप्त जाति-व्यवस्था और शोषण का काला चेहरा दिखाया है। उनके उपन्यास में जाति के नाम पर होने वाले शोषण का भिन्न-भिन्न रूप दिखायी पड़ता है। आज भी जाति एक गंभीर समस्या के रूप में विद्यमान है जो मनुष्य को मनुष्य और मनुष्यता से दूर करता जा रहा है।

निष्कर्ष – जाति व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ मनुष्यता औंधे मुँह गिरती है,यह व्यवस्था इश्वर प्रदत नहीं बल्कि ब्राह्मणों द्वार निर्मित शोषणकारी व्यवस्था है,चार वर्णों में विभाजित इस व्यवस्था के अंतर्गत अनेक जातियाँ है और इसमें कर्म का निर्धारण भी जाति के अनुसार किया गया है,धार्मिक ग्रंथों द्वारा समय - समय पर इसे पुष्ट भी किया जाता रहा है,इसी आधार पर उच्च जाति के लोग निम्न मानी जाने वाली जातियों का शोषण करती आई है,रांगेय राघव के उपन्यासों में जातिव्यवस्था और शोषण के रूप को देखा जा सकता है,जहाँ उच्च जाति के लोग निम्न जाति का शोषण अनेक तरह से करते हैं ,जहाँ शोषण का आधार जाति है,जातीय गुमान इस कदर हावी है कि लोग शोषण करना अपना अधिकार समझते आये हैं,रांगेय राघव ने अपने उपन्यास में जातिव्यस्था और शोषण के रूप को बखूबी दिखाया है,रांगेय राघव खुद उच्च जाति के थे परन्तु उनका विश्वास जातिव्यस्था में नहीं था वे मानवता के हिमायती थे .

[i] श्री पंडित हरगोविंद शास्त्री, मनुस्मृति : चौखंभा संस्कृत भवन, वाराणसी, संस्करण तृतीय, वि.सं. 2078, पृ. 28
[ii] डॉ. भीमराव अंबेडकर, जाति का विनाश, फारवर्ड प्रेस, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण जुलाई 2018, पृ. 37
[iii] डॉ. भीमराव अंबेडकर, जाति का विनाश, फारवर्ड प्रेस, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण जुलाई 2018, पृ. 26
[iv] पुरुषोत्तम अग्रवाल, संस्कृति, वर्चस्व और प्रतिरोध, राजकमल प्रकाशन, दूसरा संस्करण 2023, पृ. 107
[v] रांगेय राघव, आखिरी आवाज, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 117
[vi] रांगेय राघव, आखिरी आवाज, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 266
[vii] रांगेय राघव, कब तक पुकारूँ, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 14
[viii] रांगेय राघव, कब तक पुकारूँ, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 141
[ix] रांगेय राघव, कब तक पुकारूँ, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 310
[x] रांगेय राघव, कब तक पुकारूँ, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 311
[xi] रांगेय राघव, लखमा की आँखें, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 10
[xii] रांगेय राघव, लोई का ताना, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 62
[xiii] रांगेय राघव, लोई का ताना, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 40
[xiv] रांगेय राघव, रत्ना की बात, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 7
[xv] रांगेय राघव, रत्ना की बात, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2023, पृ. 34
[xvi] रांगेय राघव, रत्ना की बात, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण २०२३,पृष्ठ 45